Jai Maa Saraswati Gyandayini ISSN: 2454-8367
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Accessed & Indexed)
Web: www.jmsjournals.in Email: jmsjournals.in@gmail.com
Vol. 3, Issue-I
July 2017
Impact Factor : 4.032 (IIJIF) UGC Approved e-Journal No. - 43919 e-ISJN: A4372-3118

# भारतीय लोकतंत्र का अध्ययन : निर्वाचन आयोग की भूमिका के विशेष संदर्भ में 1990 के पश्चात् से वर्तमान तक

**रोहित भारती**
शोधार्थी
जीवाजी वि0वि0 ग्वालियर (म0प्र0)

**सारांश**

*मनुष्य, मनुष्य का गुलाम रहा, प्रकृति का गुलाम रहा, देवताओं का गुलाम रहा, रीति रिवाजों का गुलाम रहा, पूर्वग्रहों एवं कुसंस्कारों का गुलाम रहा, अंधविश्वासों का गुलाम रहा, अज्ञान और मोह का गुलाम रहा, लोकतंत्र उस व्यवस्था का नाम है, जो मनुष्य को इन सब दासताओं से मुक्त कराना चाहती हैं।*[1]

इसी मुक्त व्यवस्था को बनाये रखने के लिए संविधान निर्माताओं ने एक ऐसी स्वात्तशासी संस्था का निर्माण किया जिसे निर्वाचन आयोग के नाम से जानते है। चुनाव या निर्वाचन को लोकतंत्र का आधार स्तम्भ कहा जाता है जिसके माध्यम से जनता अपने प्रतिनिधि को चुनती है और उन्हें देश की बागडोर सौंपती है। भारत में लोकतंत्र में चुनाव किसी महोत्सव से कम नही, किन्तु दुर्भाग्य से हमारी चुनाव प्रक्रिया में कुछ खामियां आ गई है जिसके कारण लोकतंत्र पर खतरा मंडराने लगा है।

## लोकतंत्र व उसका बदलता हुआ स्वरुप

सारी जिंदगी हम भिन्न–भिन्न समूहों तथा संगठनों के घटक बने रहते हैं परिवार, पड़ोस, क्लब तथा रोजगार की ईकाईयों से लेकर राष्ट्रों तथा राज्यों तक। इन सभी संगठनों में, चाहे वह छोटे हों चाहे बड़े, समूचे संगठन के बारे में निर्णय करने हेतु कि क्या उद्देश्य सामने रखा जाए, नियमावली क्या हो उसके घटकों तथा लाभों का बँटवारा कैसे हो। इन सबको सामूहिक निर्णय कहा जाता है, जबकि वे निर्णय जो लोग अकेले तौर पर लेते हैं, व्यक्तिगत निर्णय कहलाते हैं। लोकतंत्र सामूहिक निर्णय निर्धारण की एक पद्धति है। यह इस आदर्श को लेकर चलता है। जिन निर्णयों से सारा समूह या संगठन प्रभावित होता हो, वे उस संगठन के सभी घटकों की सहमति से होने चाहिए और सभी घटकों को निर्णय लेने में शामिल होने का बराबर अधिकार होना चाहिए। दूसरे शब्दों में कहा जाएगा कि लोकतंत्र के दो मूल सिद्धान्त हैं। एक तो सामूहिक निर्णयों पर सार्वजनिक नियंत्रण और दूसरे, वह नियंत्रण लागू करने में अधिकारों की समानता। जिस हद तक ये दोनों सिद्धान्त किसी[2] संगठन की निर्णय–निर्धारण पद्धति में विद्यमान हो, उस हद तक उसे लोकतांत्रिक कहा जा सकता है।

---

[1] **शास्त्री इन्द्रचन्द्र (2013):** लोकतंत्र का लक्ष्य, नई दिल्लीः सस्ता साहित्य मण्डल.
[2] http://wikipedia.org/democracy2001

Jai Maa Saraswati Gyandayini ISSN: 2454-8367
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Accessed & Indexed)
Web: www.jmsjournals.in Email: jmsjournals.in@gmail.com
Vol. 3, Issue-I
July 2017
Impact Factor : 4.032 (IIJIF) UGC Approved e-Journal No. - 43919 e-ISJN: A4372-3118

भारत में लोकतंत्र एवं प्रतिनिधि संस्थाओं का इतिहास बहुत पुराना है। उसकी जड़े ईसा से कम से कम 3000 वर्ष पूर्व वैदिक काल जाती है। लोकतान्त्रिक सिद्धान्तों एवं प्रतिनिधि संस्थाओं का प्रारम्भिक उल्लेख ऋग्वेद और अथर्ववेद से मिलता है और बाद में महाभारत, शुक्राचार्य के नीतिशास्त्र, बौद्ध साहित्य, कौटिल्य के अर्थशास्त्र आदि में। किन्तु उस लोकतंत्र में राजा भी होता था और उस राजा को शासन व्यवस्था में आदर एवं सम्मान प्राप्त था। केवल राजा की उपस्थिति के कारण यह तर्क नहीं दिया जा सकता कि वह लोकतंत्र नहीं राजतंत्र था। राजतंत्र में राजा को अनियंत्रित अधिकार प्राप्त होते हैं। किन्तु प्राचीन भारत में ऐसा नहीं था। राजा अपने आमात्यों, सभासदों तथा प्रजाजनों के परामर्श से राज–काज चलाता था और प्राचीन राजव्यवस्था में राजा के अधिकारों का नहीं कर्त्तव्यों का बोध था। राजा का अस्तित्व केवल राजतंत्र का द्योतक माना जाए तो ब्रिटेन व जापान भी राजतंत्र कहे जाएंगे। किन्तु राजा के रहते हुए भी ब्रिटेन और जापान की गणना आधुनिक युग के अच्छे लोकतंत्रात्मक राज्यों में की जाती है।

प्राचीन गणतांत्रिक व्यवस्था में आजकल की तरह ही शासक एवं गुणों के आधार पर इनके चुनाव की प्रक्रिया आज के दौर से थोड़ी भिन्न जरूर थी। सभी नागरिकों को वोट देने का अधिकार नहीं था। ऋग्वेद तथा कौटिल्य साहित्य ने चुनाव पद्धति की पुष्टि की है। परन्तु उन्होंने वोट डालने के अधिकार पर रोशनी नहीं डाली है।[3]

भारत में व्यवहार में लोकतंत्र का प्रारम्भ संविधान निर्माताओं ने 1952 में हुए प्रथम साधारण चुनाव के समय से ही 21 वर्ष की आयु के प्रत्येक वयस्क नागरिक को मत देने का अधिकार दिया, जिसे बाद में 18 वर्ष कर दिया गया। इस मतदान प्रक्रिया को सशक्त, निष्पक्ष, सुचारु रुप देने के लिए संविधान के भाग 15 के 324वें अनुच्छेद में यह साफ तौर पर कहा गया है कि चुनावों का दिशा निर्देशन तथा नियंत्रण चुनाव के अध्यक्ष के दौरान निहित किया जाएगा।

**उद्देश्य**

- बदलते परिदृश्य में लोकतंत्र का रुप
- लोकतंत्र के समक्ष नई चुनौतियां, समाधान
- चुनाव सुधार में कार्यपालिका की भूमिका तथा लोकतंत्र पर पड़ने वाला प्रभाव
- मतदाता को किस प्रकार सशक्त और जागरुक बनाया जाए?

**लोकतंत्र के समक्ष नई चुनौतियां**

स्वतंत्रता से पूर्व और आज तक भारतीय लोकतंत्र ने अनेक चुनौतियों का सामना किया। लोकतंत्र एक शब्द मात्र नहीं है। यह एक मूर्त अवधारणा है क्योंकि इसको जीवित रखने के लिए मूर्त लोगों द्वारा प्रयास किया

3 https://hi.wikipedia.org/wiki/

Jai Maa Saraswati Gyandayini ISSN: 2454-8367
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Accessed & Indexed)
Web: www.jmsjournals.in Email: jmsjournals.in@gmail.com
Vol. 3, Issue-I
July 2017
Impact Factor : 4.032 (IIJIF) UGC Approved e-Journal No. - 43919 e-ISJN: A4372-3118

गया। जिसको निखारने के लिए स्वतंत्रता पूर्व बलिदानों को गिना नहीं जा सकता। उसी प्रकार आज भी इसे सुचारु रुप देने के लिए संविधान में विभिन्न संस्थाओं और जागरुक संस्थाओं द्वारा अपना योगदान दिया जा रहा है। **उदाहरणः सूचना का अधिकार और जनलोकपाल।**

आज लोकतंत्र के समक्ष अनेक चुनौतियां है जिसमें प्रमुख चुनौती हमारे सामने इस प्रकार है[4] –

1. मनतंत्र (बौद्विक तानाशाही)
2. धनतंत्र
3. वंशवाद

1. **मन तंत्र**– जिसे हम बौद्विक तानाशाही भी कह सकते हैं, जिसमें हम यह कह सकते हैं। मेरा मन मैं कुछ भी बोलूं जेसे नवीनतम घटना क्रम में जे.एन.यू. छात्रसंघ अध्यक्ष कन्हैया और कुछ सहयोगियों द्वारा Go India Back का नारा दिया भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इसको गलत माना गया है।

   मन तंत्र में हम अभिव्यक्ति की आजादी का प्रयोग रामबाण के रूप में करते हैं। जहाँ पर हम अपने अभिव्यक्त किये हुए वाणों को Social Media समाचार पत्र, इण्टरव्यू, Public Place में बोलते रहते हैं। जिसके कि लोकतंत्र का निर्माण करने वाली कड़ियाँ कमजोर पड़ जाती हैं और समाज में उपस्थित सभी वर्गों के लोगों को आघात पहुँचता है।

**2 धनतंत्र**– मनी तंत्र से लोकतंत्र को कैसे बचाया जाए इसके लिए हमारे साथ सभी लोग साथ आए और Minimium Government and good gouevence के तहत काम किया जा रहा है।

## वंशवाद की गिरफ्त में भारत

वंशवाद या परिवारवाद शासन की यह पद्वति है जिसमें एक ही परिवार, वंश या समूह से एक के बाद एक कई शासक बन जाते है। वंशवाद, भाई भतीजावाद का जनक और इसका एक रुप है। ऐसा माना जाता है कि लोकतंत्र में वंशवाद के लिए कोई स्थान नहीं है किन्तु फिर भी अनेक देशों में अब भी वंशवाद हावी है। वंशवाद निकृष्टतम कोटि का आरक्षण है। वंशवाद, आधुनिक, राजनैतिक सिद्वान्तों एवं प्रगतिशीलता के विरुद्व है। दशकों से भारतीय राजनीति में कश्मीर से कन्याकुमारी तक चंद राजनीतिक परिवारों का दबदवा रहा है, वंशवाद भारतीय राजनीति का एक ऐसा विषय है जिसका अध्ययन और आलोच्य करते कई राजनेता और कई दल इसकी चपेट में आ गए अक्सर यह बात सिर्फ गांधी परिवार के विषय में उभरती थी लेकिन सभी राज्य किसी–किसी प्रकार से उसमें शामिल हो गए है।

[4] भारती रोहित 2016: "धर्म जनता के लिए अफीमः भारत के सन्दर्भ में एक अध्यन" www.researchinspiration.com vol(1) issue II agust 2016.

Jai Maa Saraswati Gyandayini ISSN: 2454-8367
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Accessed & Indexed)
Web: www.jmsjournals.in Email: jmsjournals.in@gmail.com
Vol. 3, Issue-I
July 2017
Impact Factor : 4.032 (IIJIF) UGC Approved e-Journal No. - 43919 e-ISJN: A4372-3118

**वंशवाद से हानियाँ**

1. वंशवाद के कारण नये लोग राजनीति में नहीं आ पाते।
2. वंशवाद सच्चे लोकतंत्र को मजबूत नहीं होने देता।
3. आयोग्य शासक देश पर शासन करते है जिससे प्रतिभासम्पन्न के बजाय मेडियोक्रेसी को बढ़ावा मिलता है।
4. समान अवसर का लाभ पीछे छूट जाता है।
5. ऐसे कानून एवं नीतियां बनायी जाती है जो वंशवाद का भरण–पोषण करती रहती है।
6. आम लोगों में कुंठा की भावना धर करने लगती है।
7. दुष्प्रचार (प्रोपेगैण्डा), चमचातंत्र, धनबल एवं भ्रष्टाचार को बढ़ावा दिया जाता है ताकि जनता का ध्यान वंशवाद की कमियों से दूर रखा जा सके।
8. जनता में स्वतंत्रता की भावना की कमी बनी रहती है।
9. देश की सभी प्रमुख संस्थायें पंगु बनाकर रखी जाती है।

टाइम्स नाऊ के अर्णव गोस्वामी जब राहुल गांधी से सवाल करते है कि बार–बार आपके परिवार का नाम क्यों लिया जाता है? राहुल कहते है कि मैं नाम नहीं लेता हूँ। कौन कहता है? असली मुद्दा यह है कि मैं इस परिवार में मैं पैदा हुआ यह मेरा चयन नहीं था। मैंने दस्तखत नहीं किए थे कि मैं इस परिवार में पैदा होना चाहूँगा। वंशवाद की अवधारणा के खिलाफ हूँ। भारत में वंशवाद का प्रत्येक राज्य का चित्रण का उल्लेख निम्न प्रकार है।

[5]

[5] वंशवाद की गिरफ्त में भारतः आज तकः http://aajtak.intoday.in/dynasty-graphic.php

Jai Maa Saraswati Gyandayini ISSN: 2454-8367
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Accessed & Indexed)
Web: www.jmsjournals.in Email: jmsjournals.in@gmail.com
Vol. 3, Issue-I
July 2017
Impact Factor : 4.032 (IIJIF) UGC Approved e-Journal No. - 43919 e-ISJN: A4372-3118

**समाधान**

भारत में वंशवाद गलत नहीं समय–समय पर इसके परिणाम से पता चलता है कि निरन्तर प्रयोग से जनभागीदारी खत्म हो रही है, जिससे लोकतंत्र में ''गुमराह लोकतंत्र'' का जन्म हो रहा है। इसे खत्म करने के लिए जनजागरुकता का विकास किया जाए। समय–समय पर विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, सेमीनार का आयोजन कर प्राचीन इतिहास का उल्लेख कर वंशवाद से उत्पन्न होने वाली अलोकतांत्रिक व्यवस्था से उत्पन्न अव्यवस्था को बताया जाए। ग्रामीण स्तर पर ग्रामसभाओं में वंशवाद के ऊपर ग्रामीण भाषा में नाटक का आयोजन कर इसके दुष्परिणाम के विषय में बताया जाए।

**चुनाव सुधार पर खामोशी क्यों?**

सन् 1991–92 के बाद से ही हमारे राष्ट्रीय विमर्श में यह बात बहुत भरोसे से कही जाती है कि देश में आर्थिक सुधारों को लेकर राष्ट्रीय सहमति है। आश्चर्य की बात है कि राजनीतिक–प्रशासनिक सुधारों, खासतौर पर चुनाव सुधारों के बारे में यही बात भरोसे के साथ नहीं कही जाती। क्या हम अपने देश में बड़े पैमाने पर चुनाव सुधार नहीं चाहते? सच यह है कि देश में चुनाव सुधार को लेकर रायशुमारी की जाए तो उसके पक्ष में भारी मतदान होगा। उतना समर्थन शायद ही आर्थिक सुधारों को मिले। पर हमारे सियासतदान और बड़े पदों पर बैठे लोग लोकतंत्र के इस बड़े एजेन्डे को उठाने में वैसी तत्परता नहीं दिखाते, जैसे वे आर्थिक सुधारों के मुद्दों को उठाने में दिखाते है। हाल के वर्षों में निर्वाचन आयोग, न्यायविदों, समाजशास्त्रियों और सिविल सोसाइटी की तरफ से चुनाव सुधार के कई महत्वपूर्ण सुझाव आए पर कानून बनाने और बदलने वाले लोगों की तरफ से कोई बड़ी पहल सामने नहीं आई।

पिछली यू0पी0ए0 सरकार ने राजनीतिक दलों और उम्मीदवारों की चुनाव–फडिंग के बारे में निर्वाचन आयोग द्वारा पेश कुछ प्रस्तावों–सुझावों को जिस तरह आनन फानन में खारिज किया या कुछेक को ठंडे बस्ते में डाला, उससे सरकार की लोकतांत्रिक व्यवस्था पर गम्भीर सवाल उठते हैं? बीते कुछ सालों के अनुभवों की रोशनी में आमतौर पर देश का हर तबका मानता है कि जिन कुछ संवैधानिक निकायों ने हमारे लोकतंत्र को जीवंत और जनपक्षी बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है उनमें निर्वाचन आयोग सबसे उल्लेखनीय है। इस आयोग ने अपने कामकाज और अनुभवों से सबक लेते हुए नयी सरकार के गठन होते ही एक प्रस्ताव दिया कि राजनीतिक दलों की चुनाव–फडिंग की मौजूदा नियमावली में कुछ जरुरी संशोधन होने चाहिए। जनप्रतिनिधित्व कानून से सम्बद्व अनुच्छेद के खास पैरे (29 सी) में बदलाव के जरिये इसे पुख्ता किया जा सकता है। आयोग का कहना है कि पार्टियों को दिये जा रहे चंदे या सहयोग की राशि अगर 20 हजार से कम भी है तो उसका पूरा ब्यौरा दर्ज कराया जाना चाहिए कि उक्त राशि को देने वाले कौन लोग है? उनके पैन

Jai Maa Saraswati Gyandayini ISSN: 2454-8367
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Accessed & Indexed)
Web: www.jmsjournals.in Email: jmsjournals.in@gmail.com
Vol. 3, Issue-I
July 2017
Impact Factor : 4.032 (IIJIF) UGC Approved e-Journal No. - 43919 e-ISJN: A4372-3118

नम्बर आदि का उल्लेख किया जाना चाहिए। अभी तक पार्टियों के चुनाव फंड में योगदान करने वाले सिर्फ चंदा–दाताओं या सहयोग–दाताओं का ब्यौरा दर्ज होता है, जो चेक द्वारा 20 हजार रुपये से ज्यादा का सहयोग या चंदा देते हैं। आयोग ने पिछले कुछ वर्षों के अपने अनुभवों की रोशनी में पाया कि इस प्रावधान का भारी पैमाने पर दुरुपयोग हो रहा है। कई बार लाखों, करोड़ों की फडिंग 20 हजार से नीचे की कई किश्तों में कर दी जाती है। ऐसे सहयोग–दाताओं का पता तक नहीं चलता और पार्टियां मालामाल हो जाती है। एक भरोसेमंद आकलन के मुताबिक देश के राजनीतिक दलों को मिलने वाली कुल राशि के 75 फीसदी हिस्से से ज्यादा के स्रोत का कोई अता–पता नहीं होता। पार्टियां साफ नहीं करती यह राशि उन्हें कहां से मिलती है? प्रमुख राष्ट्रीय दलों को हरेक वर्ष करोड़ों की रकम चंदे या सहयोग के नाम पर मिलती है। इसमें बड़ी रकम का स्रोत अज्ञात होता है। एसोसिएशन ऑफ डेमोक्रेटिक रिफार्म्स (एडीआर) शोध रिपोर्ट के मुताबिक राजनीतिक दलों को कारपोरेट घरानों से मिलने वाली कुल राशि का 87 फीसदी हिस्सा देश के दो प्रमुख राजनीतिक दलों को जाता है। एडीआर रिपोर्ट के मुताबिक सन् 2004–2012 के बीच राजनीतिक दलों की कुल आय 4895.96 करोड़ दर्ज थी लेकिन वैध चुनावी ट्रस्टों और अन्य स्रोतों से उन्हें मात्र 10 से 16 फीसदी रकम मिली। अज्ञात स्रोतों से मिलने वाली रकम का हिस्सा 75 फीसदी जो कुछ ज्यादा आंका गया। इस अवधि में कांग्रेस और भाजपा जैसे बड़े दलों को अज्ञात स्रोतों से मिलने वाली राशि कुल आय का 73 फीसदी से ऊपर थी। अज्ञात स्रोतों से राष्ट्रीय कांग्रेस को सबसे ज्यादा मिली बताई गई है। यह राशि 91.58 फीसदी है। सीपीआई को 14.7 फीसदी रकम अज्ञात स्रोतों से मिली बताई गई है। पार्टियों द्वारा कैश या चंदा लेना आम बात है। इसके हिसाब–किताब में पारदर्शिता कैसे सम्भव है?

यह आकड़े सन् 2004–2012 के बीच के है, इन आकंड़ों में फेरबदल हुआ है और दलों की हिस्सेदारी का स्वरुप और अज्ञात स्रोतों से मिलने वाली रकम की मात्रा अब और बढ़ गई है, बताई जा रही है। भारतीय चुनाव प्रक्रिया और हमारे लोकतांत्रिक ढांचे का वह बड़ा अंधा कुँआ है। कहीं न कहीं यह अंधा कुँआ हमारे लोकतांत्रिक प्रक्रिया को निगल रहा है। इससे चुनाव प्रक्रिया की पारदर्शिता प्रभावित हो रही है। निर्वाचन आयोग ने इस बावत ठोस कानूनी प्रावधान की बार–बार वकालत की है। पर आई गई तमाम सरकारों और राजनीतिक दलों, यहां तक कि नौकरशाही की तरफ से भी इस बारे में संजीदा होकर विचार–विमर्श करने और फैसला लेने की सदाश्यता नहीं दिखाई गई।

आयोग ने सर्वदलीय बैठकों में भी इस बावत विचार किया, पर प्रमुख राजनीतिक दलों की तरफ से भी निर्वाचन आयोग को इस मामले में कोई खास सहयोग या समर्थन नहीं मिला।

आज के सन्दर्भ में चुनाव आयोग का सबसे बड़ा प्रश्न है कि कारपोरेट फडिंग पर सुसंगत निर्णय के लिए किस तरह की पहल हो? नयी पहल के लिए राजनीतिक दलों की सहमति कैसे ली जाए? विकसित देशों,

Jai Maa Saraswati Gyandayini ISSN: 2454-8367
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Accessed & Indexed)
Web: www.jmsjournals.in Email: jmsjournals.in@gmail.com
Vol. 3, Issue-I
July 2017
Impact Factor : 4.032 (IIJIF) UGC Approved e-Journal No. - 43919 e-ISJN: A4372-3118

खासकर अमरीका और कुछ अन्य यूरोपीय देशों में कारपोरेट फडिंग के दुष्परिणाम पूरी दुनिया ने देखे, पर भारत विविधता भरे देश में कारपोरेट फडिंग पर नियंत्रण के लिए समय रहते कारगर कदम नहीं उठाए गए तो भारतीय जनतंत्र में जन की आवाज खत्म हो जाएगी और तंत्र पर सिर्फ कुछ ताकतवर कारपोरेट घरानों और कुछ असरदार सियासतदानों का कब्जा होगा।

पिछली साल चुनाव सुधार को रेखांकित करता एक मामला सामने आया। यह किसी प्रत्याशी के खर्च की छानवीन करने और उस पर फैसला लेने के निर्वाचन आयोग के अधिकार क्षेत्र का मामला है। यू0पी0ए0–2 सरकार ने इस मुद्दे पर आयोग की तरफ से दी जा रही दलील को नामंजूर कर दिया। सरकार के इस फैसले के बाद तय हो गया कि किसी प्रत्याशी से उसके चुनाव खर्च के जमा किए ब्यौरे की छानबीन या उससे सफाई मांगने का आयोग को अधिकार नहीं होना चाहिए यानि प्रत्याशी ने जो ब्यौरा दिया उसे यथातथ्य मंजूर कर लेना चाहिए। इसका मतलब साफ है कि सरकार चुनाव फंड के दुरुपयोग या आर्थिक कदाचार के मामले में निर्वाचन आयोग को किसी भी प्रत्याशी या दल के खिलाफ कार्यवाही करने का अधिकार नहीं देना चाहती।

ताजा मामला महाराष्ट्र के एक पूर्व कांग्रेसी मुख्यमंत्री का है, जिसके चलते केन्द्र सरकार ने निर्वाचन आयोग के खिलाफ अपने इस तरह के विवादास्पद मंतव्य को सूत्रबद्व किया। उक्त नेता के खिलाफ कोर्ट में मामला लम्बित है। निर्वाचन आयोग ने उनके चुनाव खर्च के कथित गोलमाल की ब्यौरेवार जांच की, जिसे उन्होंने सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दी लेकिन केन्द्र सरकार संवैधानिक संस्था निर्वाचन आयोग के तर्क के पक्ष में उतरने के बजाए उक्त नेता के पक्ष में उतर आई। शायद सरकार भूल गई या भूलना चाहती है कि सर्वोच्च न्यायालय ने दशक पहले एक मामले में अपनी राय सुनाई थी कि किसी प्रत्याशी के चुनाव खर्च में गड़बड़ी पाए जाने पर उसका चुनाव अवैध या उसे भविष्य के लिए अयोग्य घोषित करने का अधिकार निर्वाचन आयोग को है। मुझे यह नहीं समझ में आ रहा है कि सरकारें चुनाव सुधारों के प्रति कोई भी फैसला क्यों नहीं ले पाती है?

सबसे बड़ा सवाल यह है कि देश में उम्मीदवारों के चुनाव–खर्च की सीमा तय है लेकिन राजनीतिक दलों के लिए कोई सीमा तय नहीं है, ऐसा क्यों? सबसे पहले राजनीतिक दलों के खर्चों की सीमा बांधी जानी चाहिए। राष्ट्रीय दलों के लिए और क्षेत्रीय दलों के लिए अलग–अलग। उम्मीदवारों की संख्या के हिसाब से दलीय खर्च की सीमा में मामूली बदलाव भी किया जा सकता है, पर कुछ न कुछ होना चाहिए। आखिर पार्टियों के चुनाव–प्रचार खर्च की सीमा क्यों न बांधी जाए? बीते दो दशकों के चुनाव का आकलन किया जाए तो पाएंगे देश में चुनाव के दौरान होने वाले बेहताशा खर्च, उसमें कारपोरेट फडिंग और कालेधन के इस्तेमाल जैसी विकृतियों का लगातार विस्तार हुआ है।

Jai Maa Saraswati Gyandayini ISSN: 2454-8367
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Accessed & Indexed)
Web: www.jmsjournals.in Email: jmsjournals.in@gmail.com
Vol. 3, Issue-I
July 2017
Impact Factor : 4.032 (IIJIF) UGC Approved e-Journal No. - 43919 e-ISJN: A4372-3118

यह सब सिर्फ इसलिए हुआ कि अपने देश में राजनीतिक दलों के चुनाव–प्रचार खर्च पर अंकुश या नियमन के लिए कोई वैधानिक प्रावधान ही नहीं है। (2014 के चुनाव खर्च का निरुपण करो) क्योंकि चुनाव आयोग उम्मीदवारों के खर्च पर नजर रख सकता है, पार्टियों के खर्च पर नहीं।

हमारी चुनाव प्रक्रिया में आई विकृतियों का समय रहते निराकरण न होने से भी राजनीति में विचारहीनता बढ़ी है। धनशक्ति और बाहुशक्ति के दबाव में राजनीतिक सोच और राजनीतिक कार्यकर्ताओं की हैसियत गिरी है। आर्थिक सुधारों के दौर में धनार्जन करके एक नया वर्ग राजनीति में उतरा है। पुराने बाहुबलियों के साथ इन धनपतियों की जुगलबन्दी राजनीति का व्याकरण बदल रही है। ज्यादातर राजनीतिक दलों ने चुनाव में धन और बाहुबल को टिकट दिये जाने का आधार बना लिया है। वरना दलित एजेन्डे पर आधारित होने का दावा करने वाली एक प्रमुख राजनीतिक पार्टी दिल्ली में एक ''अरबपति प्रापर्टी डीलर'' को टिकट क्यों देती और समाजवादी धारा की विरासत संभालने का दावा करने वाली एक अन्य प्रमुख पार्टी अपराधिक प्रवृत्ति के किसी ''राजा'' को अपना खासमखास क्यों बनाती? धन और बाहुबल और मुद्रावली नामक प्रजातियां हो गई है? राजनीतिक मूल्यों की पतनोन्मुख पर अंकुश लगाया जा सकता था मगर आर्थिक सुधारों के साथ राजनीतिक, खासकर चुनाव सुधारों पर ध्यान नहीं दिया गया। इससे हमारे लोकतांत्रिक ढांचे में विकृतियां लगातार बढ़ती रही, इसका प्रभाव पार्टियों के अन्दरुनी तंत्र और चुनाव प्रक्रिया में भी दिखा, इन सभी कारकों ने भ्रष्टाचार को 'अस्तित्व–रक्षा' और प्रभाव–विस्तार का जरुरी आचार बना दिया। समावेशी विकास के अभाव और निवेश, उत्पादकता व रोजगार का अनुकूल माहौल न होने से लोगों में छीनाझपटी, दलाली और लूट में हिस्सेदारी की लत बढ़ी। इन विकृतियों से निपटने के लिए बढ़े प्रशासनिक सुधार, खासकर चुनावी–सुधारों की जरुरत है। कोई भी बड़ा सुधार अचानक नहीं किया जा सकता। अच्छी बात यह है कि नयी प्रोद्योगिकी और औद्योगिकीकरण नया युवा वर्ग नये ढंग से सोचता नजर आ रहा है। पर बढ़े राजनीतिक सुधार के लिए बड़ी राजनीतिक पहलकदमियों की जरुरत है। इसके लिए सत्ता–राजनीतिक (पक्ष–विपक्ष) दोनों बड़े किरदारों को आगे आना होगा, जब तक सुधारों के लिए बड़े कदम नहीं उठाये जाते और मतदान–पैटर्न का समाजशास्त्र नहीं बदलता तब तक सत्ता राजनीति का चाल–चरित्र बदलना आसान नहीं है।

चुनाव सुधार की दिशा में बड़ा मुद्दा है, राजनीतिक दलों के फंड का आधार तय करना और उसकी पारदर्शिता ढंग से निगरानी। दिवंगत गोस्वामी से लेकर इन्द्रजीत गुप्ता कमेटी तक चुनाव सुधार के लिए कई महत्वपूर्ण सुझाव आए। टी0एन0 शेषन और जे0एम0 लिंगदोह से लेकर वाई0एस0 कुरैशी जैसे कई यशस्वी मुख्य निर्वाचन आयुक्तों ने भी अपने स्तर पर चुनाव सुधार के लिए जरुरी मुद्दों को बहस में लाने की कोशिश की। पर बड़े सुधारों व सुझावों को सरकार और राजनीतिक दलों की तरफ से ज्यादा महत्व नहीं मिला। ऐसे में जन–दबाव और न्यायिक पहल ही सार्थक विकल्प नजर आते है।

Jai Maa Saraswati Gyandayini
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Accessed & Indexed)
Web: www.jmsjournals.in Email: jmsjournals.in@gmail.com
ISSN: 2454-8367
Vol. 3, Issue-I
July 2017
Impact Factor : 4.032 (IIJIF)
UGC Approved e-Journal No. - 43919
e-ISJN: A4372-3118

**निष्कर्ष :**

लोकतंत्र एंड्रायड मोबाइल में पड़े एप्लीकेशन की तरह है जो गलत नहीं होगा। जिस प्रकार हम अपने एप्लीकेशन को अपडेट, नए फीचर डाउनलोड करने के लिए करते है। उसी प्रकार आर0टी0आई0 और लोकायुक्त लोकतंत्र के नए वर्जन है क्योंकि इनके आने से लोकतंत्र में कुछ हद तक भ्रष्टाचार पर लगाम लगी है। अगर मैं यह कहूँ आर0टी0आई0 और लोकायुक्त का प्रयोग न करें और पिछली अवस्था में चले जाएं जब यह कानून नहीं बना था। तब हम कहेंगे भ्रष्टाचार और बढ़ जाएगा। इस तरह समय–समय पर हम इसमें कुछ न कुछ मजबूती प्रदान करते रहेंगे। तभी लोकतंत्र को एक नई दिशा प्रदान की जा सकती है। कार्यपालिका को भी अपनी भूमिका में सुधार लाना पड़ेगा। लोकसभा चुनाव में पार्टियों को अपने घोषणा पत्र में चुनाव सुधार का भी उल्लेख किया जाये जिससे लोकतंत्र को एक नई दिशा प्रदान की जा सके। हम कहते है कि भारत एक लोकतांत्रिक देश है क्यों चुनाव होते है। चुनाव होना लोकतंत्र है लेकिन चुनाव के बाद लोकतंत्र नही दिखाई देता है। चुनाव के समय चुनाव के दौरान उपस्थिति प्रतिनिधि जनता से वोट मांगने के लिए जाते है और हाथ पैर जोड़ते है लेकिन चुनाव के बाद वही जनता अपने छोटे छोटे कामों के लिए अपने निर्वाचित प्रतिनिधि के पास जाती है तो वह सालों चक्कर लगाती रहती है लेकिन काम नही हो पाता है। हमें इसी स्थिति को ध्यान में रखकर मतदाता को समय–समय पर जागरूक करना पड़ेगा जिससे वह राजनीति का शिकार न हो।

**********